ISBN : 978-93-80669-79-3

पुस्तक	:	हिंदी उपन्यास और आदिवासी विमर्श
सम्पादक	:	डॉ. अमित कुमार भारती
प्रकाशक	:	ज्ञान प्रकाशन 7/202, एल. आई. जी., आवास विकास, हंसपुरम् नौवस्ता, कानपुर-208 021 मो0 : 8004516501
E-mail	:	gyanprakashankanpur@gmail.com
संस्करण	:	प्रथम, 2017
मूल्य	:	575.00 रुपये मात्र
शब्दसज्जा	:	विष्णु ग्राफिक्स, नौबस्ता, कानपुर मो. : 8009017637
मुद्रक	:	पूजा प्रिण्टर्स नौबस्ता, कानपुर

HINDI UPANYAS AUR AADIWASI VIMARSH

Editted By : Dr. Amit Kumar Bharti

Price : Rs. Five Hundred Seventy Five Only

अनुक्रमणिका

1. काला पादरी : आलोचना, अन्तर्कथा एवं कुछ और.... 13 - 44
प्रोफेसर दयाशंकर

2. आदिवासी और धूणी तपे तीर 45 - 52
डॉ. शिव प्रसाद शुक्ल

3. जंगल का समाजशास्त्र 53 - 75
डॉ. यशवन्त कुमार वीरोदय

4. विकिरण, प्रदूषण और विस्थापन की त्रासदी झेलते आदिवासियों की त्रासद गाथा : 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' 76 - 87
डॉ. नवीन नन्दवाना

5. माड़िया-गोंड़ो आदिवासी का संवेदनशील दस्तावेज़ : शाल वनों का द्वीप 88 - 104
डॉ. माया प्रसाद पाण्डेय

6. 'आमचो बस्तर' में चित्रित आदिवासी जन-जीवन 105 - 119
डॉ. सुभद्रा राठौर

7. अधिकार का जागरण : शैलूष 120 - 127
डॉ. श्रीपति कुमार यादव

8. रणेंद्र- ग्लोबल गाँव का देवता 128 - 132
डॉ. गौरी त्रिपाठी

9. उपनिवेशवाद में नवसाम्राज्यवादी शोषण का यथार्थ : गायब होता देश 133 - 138
बृजेश कुमार कौशल

8

रणेंद्र- ग्लोबल गाँव का देवता

२१ वीं सदी विमर्शों की सदी है। वर्तमान परिदृश्य में हमारे सामने अनेक विमर्श मौजूद हैं। जैसे – स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, अल्पसंख्यक विमर्श, पर्यावरण विमर्श, आदिवासी विमर्श इत्यादि। लगातार होते हुए विमर्शों पर चिंतन जारी है और २१ वीं सदी में वे विमर्श जो हाशिये पर थे वे आज केंद्र में आने लगे हैं। आदिवासी समाज एवं उसकी उपस्थिति ने वर्तमान सामाजिक परिस्थिति को उनकी ओर सोचने पर मजबूर कर दिया है कि यह समाज फिलहाल में हमारे सामने आया है कि इसका अपना इतिहास व संस्कृति है तथा इसने हमारी सांस्कृतिक विरासत को जमीन से जोड़ रखा है तथा यह उन पुरानी विरासत को उसी तरह संरक्षित कर रहा है, जिस प्रकार वह अपनी असली रूप में थी। "माता भूमि, पुत्रोऽहं पृथ्वियां' धरती मेरी माँ है और मैं उसक पुत्र हूँ। अथर्ववेद के 'पृथिवी सूक्त' में ऋषि का यह उद्घोष मानवीय चिंतन की चरण परिणति है।" उक्त सूक्ति वाक्य आदिवासी समाज पर पूर्णतः सटीक बैठता है जो पर्यावरण एवं संस्कृति विरासत में अपना अमूल्य योगदान दे रहा है। समकालीन विमर्शों में आदिवासी विमर्श एक प्रमुख विमर्श बनकर उभरा है कथाकार रणेंद्र 'ग्लोबल गाँव का देवता' का उपन्यास २००६ में प्रकाशित हुआ।

स्वातन्त्र्योत्तर उपन्यास का प्रारंभ सन् १९४७ के बाद प्रारंभ होता है। देश के विभाजन के परिणामस्वरूप अराजकता की जो आंधी चली, निरीह प्राणियों का जो रक्तपात हुआ, उससे साहित्यकार का विशेषतः उपन्यासकार का आसन डोल गया। "उसका अंतर्मुखता भंग हो गई और वह व्यक्ति–मानस की गहराईयों से उभरकर पुनः समाज लौट आया – समाज के प्रति आक्रोश से भरकर। वह चिंतन सत्य का अन्वेषण छोड़' तात्कालिक यथार्थ की ओर मुड़ा, शाश्वत प्रश्नों को भूलकर, वर्तमान समस्याओं में प्रवृत्त हुआ और वस्तुपरक होने लगा।" समय पाकर व्यक्तिनिष्ठ उपन्यासकारों की कृतियाँ भी प्रकाश में आने लगी, जिनमें मनोविश्लेषणवादी और अस्तित्ववाद पर आधारित उपन्यास प्रमुख है जिन्होंने मानस की गहराईयों को नापते हुए मानव के व्यक्तित्व एवं उनके संबंधों को नई परिभाषा में गड़ा।' "स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जब देश की एकाग्रता भंग हुई, एकता